रामचन्द्रिका की भाषा

भाषा विचारों को अभिव्यक्त करने का साधन है। कवि की भाषा का निर्माण अनेक प्रभावों से होता है। इन प्रभावों में प्रमुख हैं—संस्कारगत प्रभाव, युगीन अथवा देशकालीन प्रभाव और कवि का अपना अध्ययन। केशव की भाषा पर इन तीनों प्रभावों का प्रभाव स्पष्टतः परिलक्षित होता है।

संस्कृतनिष्ठ—केशव का जन्म उस परिवार में हुआ था जिसके घर के दास भी भाषा बोलना नहीं जानते थे। संस्कृत के इस गम्भीर वातावरण में वे पले और पनपे। अतः केशव की भाषा पर संस्कृत का प्रभाव पड़ना अनिवार्य था। यही कारण है कि रामचन्द्रिका में अनेक ऐसे छन्द मिलते हैं जिनकी अधिकांश भाषा संस्कृत है। यथा—

1. **'रामचन्द्रपदपद्म वृन्दारकवृन्दामिवन्दनीयम्।**
   केशवपति भूतनया लोचन चंचरीकायते।।'
2. **'सीता शोभन ब्याह उत्सुक सभा संसार संभावना।**
   ततत्कार्य समग्र व्यग्र मिथिलावासी जना शोभना।।
   राजाराजपुरोहितादि सुहृदा मंत्री महा मंत्रदा।
   नाना देश समागता नृपगणा पूज्यापरा सर्वदा।।
3. **'अनन्ता सबै सर्वदा शस्ययुक्ता।**
   समुद्राबधि सप्त ईतिर्विमुक्ता।।'

कहीं-कहीं केवल संस्कृत की विभक्तियों का प्रयोग मिलता है। यथा—

1. **'सिरसि जटा बाकल बपुधारी।**
2. **उरसि अंगद लाज कछू गहो।'**

यहाँ 'सिरसि' 'उरसि में सप्तमी विभक्तियाँ हैं जिनके अर्थ हैं— सर पर और उर में।

कहीं-कहीं संस्कृत की क्रियाओं का प्रयोग है। यथा—

1. **'ज्यों नारायन उर श्री वसंति।'**
2. **'तदपि सृजति रागन की सृष्टि।'**

यहाँ वसंति' और 'सृजति' संस्कृत की क्रियाएँ हैं।

इस प्रकार के प्रयोगों में भावाभिव्यक्ति में किसी प्रकार की मनोहारिता अथवा प्रभावोत्पादकता नहीं आई है। हाँ केशव के पांडित्य-प्रदर्शन के इच्छुक मन को अवश्य ही थोड़ा-बहुत परितोष मिल गया होगा।

बुंदेलखंडी—देशकालीय प्रभाव के कारण रामचन्द्रिका की भाषा में बुन्देलखंडी भाषा के शब्दों का प्रयोग भी स्थान-स्थान पर दिखाई देता है। स्यौं, समदौ, भाँड़्यो, गौरमदाइन आदि शब्द बुन्देलखण्ड के ही हैं जिनका प्रयोग रामचन्द्रिका में निसंकोच हुआ है। यथा—

1. **'देवन स्यों जनु देव सभा सुभ सीय स्वयम्बर देखन आई।'**
2. **'दुहिता समदौ सुख पाय अबै।'**
3. **'कहूं भाँड़ भाड़्यो करै मान पावै।'**
4. **'धनु है यह गौरमादाइन नाहीं।'**

रामचन्द्रिका की भाषा में बुन्देलखण्डी शब्दों का इतनी प्रचुरता से प्रयोग हुआ है कि इसकी भाषा को बुन्देलखण्डी-मिश्रित-ब्रजभाषा कहा जा सकता है। कही-कहीं अवधी भाषा के शब्दों का भी प्रयोग दिखाई देता है, किन्तु ऐसे प्रयोग अधिक नहीं हैं।

अरबी-फारसी—केशव का आविर्भाव जिस युग में हुआ, वह मुगलों के प्रभुत्व का युग था, अतः रामचन्द्रिका की भाषा में अरबी-फारसी के शब्दों का आ जाना स्वाभाविक ही है, किन्तु इन विदेशी-भाषाओं के शब्दों का प्रयोग करते समय केशव ने हिन्दी-भाषा की प्रवृत्ति और प्रकृति का सदैव ध्यान रखा है। यथा—

1. **'गनपति सुखदायक, पसुपति लायक, सूरसहायक कौन गने।'**
2. **'देखि तिन्हैं तव दूरि ते गुदरानो प्रतिहार।'**
3. **'पुनि तुम दीन्ही कन्यका त्रिभुवन की सिरताज।'**
4. **'जामवन्त हनुमंत नल नील मरातिब साथ।'**

नव-निर्मित शब्द—अध्ययन का प्रभाव केशव के उन प्रयोगों में देखा जाता है, जहाँ इन्होंने शब्दों को तोड़ा-मरोड़ा है। अथवा स्वयं शब्द गढ़े हैं। यद्यपि छन्द की सुरक्षा के लिए कवि को शब्द को तोड़ने-मरोड़ने का पूर्ण अधिकार है, किन्तु इस अधिकार पर यह प्रतिबन्ध भी है कि वे इस सीमा तक ना तोड़े-मरोड़े जायें कि वास्तविक रूप का पता लगाना ही कठिन हो जाय। केशव इस प्रतिबन्ध के प्रति भी जागरूक रहे हैं। यथा—

1. **'असेस सास्त्र बिचारिकै, जिन जान्यो मत साध।'**
2. **'बरषा फल फूलन लायक की।'**

यहाँ 'साध' और 'लायक' के वास्तविक रूप 'साधु' और 'लाजक' का आसानी से पता चल जाता है।

केशव ने कुछ शब्द स्वयं भी गढ़ लिये हैं। यथा—

1. 'अति कोमल केसव बालकता। बहु दुस्कर राकस घालकता।
2. 'दैवन गुन पर्ख्यो पुष्पन बर्ख्यो, हर्ख्यो अति सुरनाहु।'
3. 'अखण्ड कीर्ति लेय, भूमि देयमान मानिये।'
4. 'अदेव देव जेय, भीति रक्षपान लेखिये।'

इन पंक्तियों में बालकता, घालकता, बर्ख्यो, देयपान और रक्षपान शब्द केशव के गढ़े हुए हैं।

रामचन्द्रिका में कुछ अप्रचलित शब्दों का भी प्रयोग हुआ है। यथा—

1. 'अनन्त मुख गावै बिसेषहि न पावै।
2. 'लीन्हों लवनासुर सूल जहाँ। मार्‌यो रघुनन्दन बान तहाँ।'
3. 'अंगद संग लै मेरो सबै दल आजहु क्यों न हनै बपुमारे।'
4. 'विषमय वह गोदावरी, अमृत के फल देति।
   केशव जीवनहार को, दुःख असेषि हरि लेत॥

यहाँ बिसेषहि (विशेषहि), रघुनन्दन, बपुमारे, विषमय, जीवनहार शब्द क्रमशः अन्त, शत्रुध्न, बाप के मारने वाले, जलयुक्त और जल पीने वाले के अर्थ में प्रयुक्त हुए हैं। इन अर्थों के लिए ये शब्द प्रचलित नहीं हैं।

भाषा की शक्ति को बढ़ाने के लिए कवि अलंकार, छंद, लोकोक्ति, मुहावरे आदि का प्रयोग भी कहते हैं। केशव ने इन सभी साधनों को अपनाया है।

अलंकार—केशव अलंकारों की भाषा का अनिवार्य धर्म मानते हैं। उनका कहना है कि जिस प्रकार, सुजाति, सुवर्ण, सुलक्षणी, सरस और सुवृत्त होने पर भी वनिता बिना अलंकारों (आभूषणों) के शोभा नहीं पाती, उसी प्रकार भाषा की अन्यान्य गुणों से युक्त होने पर भी अलंकारों के अभाव में अपने सौन्दर्य को प्राप्त नहीं करती। इस मान्यता के पोषक केशव की भाषा में अलंकारों का बाहुल्य होना स्वाभाविक ही था। केशव ने अर्थालंकार और शब्दालंकार दोनों का प्रयोग किया है। ये प्रयोग कहीं भावों की अभिव्यक्ति में साधक हैं तो कहीं-कहीं बाधक भी बन गये हैं। यथा—

'धरे एक बेनी मिली मैल सारी।
मृनाली मनो पंक तें काढि डारी॥'

इन पंक्तियों में विरहिणी सीता का वर्णन है जिसकी लटें उलझ कर एक वेणी बन गई हैं और जो मैली साड़ी पहने हुए हैं। कवि उसकी दशा का उत्प्रेक्षा अलंकार के द्वारा वर्णन करता है कि वह ऐसी प्रतीत होती है, मानो मृणाली को पंक से निकाल फेंका गया हो। यहाँ पर उत्प्रेक्षा अलंकार का बहुत ही प्रभावपूर्ण प्रयोग है। और—

'सातहु दीपन के अवनीपति हारि रहे जिसमें जब जाने।
बीस बिसे वत भंग भयो सु कहौ एक केसव को धनु ताने॥
सोक की आग लगी परिपूरन आइ गये घनस्याम बिहाने।
जानकि के जनकादिक के सब फूल उठे तरु पुण्य पुराने॥'

राम को देखकर राजा जनक के निराश हृदय में आशा का संचार हो जाता है कि यह राजकुमार धनुष को तोड़कर सीता का वरण करेगा। इसी भाव को रूपक अलंकार द्वारा इन पंक्तियों में व्यक्त किया गया है। यहाँ रूपक अलंकार का प्रयोग भाववर्द्धक है।

शब्दालंकारों में केशव ने श्लेष अलंकार का अपेक्षाकृत अधिक प्रयोग किया है। इस अलंकार का भावाभिव्यक्ति के लिए, पाठकों को चमत्कृत करने के लिए और पांडित्य प्रदर्शन के लिए प्रयोग में केशव सफल हुए हैं। यथा—

'तिन नगरी तिन नागरी प्रति पद हंसक हीन।
जलज हार सोभित न जहँ प्रकट पयोधर पीन॥'

यहाँ पर जनकपुरी और उस देश में रहने वाली नागरी का एकसाथ वर्णन हुआ है। इसी प्रकार का अनुप्रास और यमक शब्दालंकार का सफल प्रयोग निम्नलिखित छंद में हुआ है—

'सब जाति फटी दुख की दुपटी कपटी न रहै जहँ एक घटी।
निघटी रुचि मीचु घटी हूं घटी जग जीव जतीन की छूटी तटी॥'
अघ ओघ की बेरी कटी बिकटी निकटी प्रगटी गुरू ग्यान गटी।
चहुँ ओरन नाचति मुक्ति नटी गुन धूरजटी बन पंचवटी॥

कहीं-कहीं अलंकारों का प्रयोग भावाभिव्यक्ति में बाधक बन गया है। यथा—

सुन्दर सेत सरोरुह मैं करहाटक हाटक की द्युति को है।
तापर भौंरे भलो मनरोचन कोक बिलोचन की रुचि रोहै॥
देख दई उपमा जलदेविन दीरघ देवन के मन मोहै।
केशव केशवराय मनो कमलासन के सिर ऊपर सोहै॥'

यहाँ पर पम्पासर में खिले हुए कमल-पुष्प का वर्णन है जिसके ऊपर भौंरा बैठा हुआ है। कवि ने उत्प्रेक्षा की है कि भौंरा-युक्त कमल इस प्रकार प्रतीत होता है मानो ब्रह्मा के सिर पर विष्णु विराजमान हो। यह उत्प्रेक्षा भाव-शून्य ही नहीं, उपहासास्पद भी है। इसी प्रकार राम की उलूक से तुलना भी हास्यास्पद है—

'बासर की संपति उलूक ज्यौं न चितवत।'

किन्तु इस प्रकार के हास्यास्पद प्रयोग रामचन्द्रिका में कम ही हुए हैं।

छन्द—छन्दों का प्रयोग काव्य में संगीतात्मकता के साथ-साथ रस और भावाभिव्यक्ति में भी वृद्धि करता है। इसीलिए काव्य-शास्त्र के आचार्यों ने विशेष रस और भाव को अभिव्यक्त करने के लिए विशेष छन्दों का विधान किया है। जैसे—शृंगार, करुण और शांत रस के वर्णन के लिए सवैया और बरवै छन्द उपयुक्त माने गये हैं और वीर, रौद्र तथा कथानक रस के लिए छप्पय। रामचन्द्रिका में इन विधानों का काफी हद तक पालन किया गया है। यथा—

'भगन किये भव धनुष साल तुमको अब सालों।
नष्ट करों विधि सृष्टि ईस आसन ते भालों॥
सकल लोक सहरहुँ सेस सिर ते धर डारौं।
सप्त सिन्धु मिलि जाहि होइ सबही तम भारौं॥'
अति अमल जोति नारायनी कह केशव सुधि जाय बर।
भृगुनन्द संभारु कुठार हौं कियो सरासन युक्त सर।'

यहाँ रौद्र रस का वर्णन छप्पय छन्द में ही किया गया है। और करुण रस का सवैया में—

'कल हस कलानिधि खंजन कंज कछू दिन केसव देखि जिये।
गति आनन लोचन पायन के अनुरूपक से मन मानि लिये॥
यहि काल कराल तें सोधि सबै हठि कै बरषा मिस दूरि किये।
अब धौं बिनु प्रान प्रिया रहि हैं कहि कौन हितू अबलम्ब हिये॥

रामचन्द्रिका में भावानुकूल छन्दों का प्रयोग हुआ है। यथा—

'चंड चरन, छंडि धरन, मंडि गगन धावहीं।
तच्छन हुई वच्छिन दिसि लच्छहि नहिं पावहीं॥
धीर धरन, बीर बरन, सिंधु तट सुभावहीं।
नाम परम, धाम परम, राम राम गावहीं॥

इस छन्द में बानरों का सीता की खोज के लिए प्रस्थान करने का वर्णन है। छन्द की गति से इस प्रकार प्रतीत होता है, मानो वानर उछलते-कूदते जा रहे हों। भावानुकूल छन्दों की ऐसी योजना सिद्ध-कवियों से ही सम्भव है।

मुहावरे और लोकोक्तियाँ—रामचन्द्रिका की भाषा में मुहावरे और लोकोक्तियों का भी भावपूर्ण प्रयोग हुआ है। मुहावरों के कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं—

1. 'राजसभा तिनुका करि लेखौं।'
2. 'बीस बिसे ब्रत भंग भयो।'

3. 'बंचक कठोर केलि कीजै बाराबर आठ,
झूठ पाठ कंठ पाठकारी काठ पारिये।'

4. 'बोलन बोल फूल से भौंरे।'

मुहावरों की भाँति लोकोक्तियों का भी रामचन्द्रिका में सफल प्रयोग हुआ है। यथा--

1. 'होनहार है रहै मिटै मेटी न मिटाई।'

2. 'होय तिनूका बज्र तिनुका है टूटे।'

रामचन्द्रिका में अनेक स्थलों पर बुन्देलखण्डी मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग भी हुआ है। यथा–

1. 'रामचन्द्र कटि सों पटु बाँध्यो।'

2. 'जबै धनु श्री रघुनाथ जू हाथ कै लीनो।'

ध्वन्यात्मकता–ध्वन्यात्मकता भाषा का सबसे प्रधान गुण होता है। इस गुण का समावेश साधारण कवियों के बलबूते का काम नहीं। केशव ने अपनी भाषा में ध्वन्यात्मकता का काफी प्रयोग किया है। राम-परशुराम-संवाद और रावण-संवाद में भाषा की ध्वन्यात्मकता विशेष रूप से परिलक्षित होती है। यथा–

'कंठ कुठार परै अब हार कि, फूलौ अशोक कि शोक समूरो।
कै चितसारि चढ़ै कि चिता, तन चंदन चर्चि कि पांयक पूरो॥
लोक में लोक बड़ो अपलोक, सु केशवदास जु होउ सु होउ।
विप्रन के कुल को मृगुनन्दन, सूर न सूरज के कुल कोउ॥

राम परशुराम से कह रहे हैं कि चाहे जो हो जाय, सूर्यवंशी कभी ब्राह्मणों पर वार नहीं करते। इस वचन से ध्वनि यह निकलती है कि परशुराम राम को यह बता रहे हैं कि अब तुम ब्राह्मण-मात्र रह गये हो। तुम्हारे अन्दर जो नारायणी-ज्योति थी, वह अब निकल गई है। अतः तुम्हारा दंभ करना व्यर्थ है। इससे तुम्हें मुँह की खानी पड़ेगी।

अतः में, केशव की भाषा के विषय में डॉ. श्यामसुन्दरदास का यह मत उल्लेख्य है--

'हमारी दृढ़ धारणा है कि केशव ने हिन्दी को महान् गौरव प्रदान किया है। जिस प्रकार तुलसी अपनी सरलता और सूर अपनी गम्भीरता के हेतु सराहनीय हैं, वैसे ही, वरन् उससे भी बढ़कर केशव अपनी भाषा की परिपुष्टता के लिए प्रशंसनीय हैं।'

●●●